

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

सि.वा.(मू.प.) 2320/2010 में अंत.आ. सं. 4730/2011

सुरक्षित : 7 अगस्त, 2013

निर्णीत : 2 सितंबर, 2013

अनिल खन्ना

.....वादी

द्वारा : श्री अरुण खोसला एवं सुश्री श्रीका
कक्कड़, अधिवक्ता

बनाम

गीता खन्ना व अन्य

.....प्रतिवादीगण

द्वारा: श्री आशीष वर्मा, प्रतिवादी सं. 1 व
3 की ओर से अधिवक्ता
श्री आर.के. सचदेवा, प्रतिवादी सं.
2 की ओर से अधिवक्ता
श्री गौरव दुआ, प्रतिवादी सं. 4 की
ओर से अधिवक्ता
श्री पी.के. मित्तल, प्रतिवादी सं.
6/डीडीए की ओर से अधिवक्ता

कोरम:

मा. न्या. सुश्री मुक्ता गुप्ता

1. इस आवेदन के माध्यम से वादी प्रतिवादी सं. 4 द्वारा दायर लिखित बयान में किए गए प्रवेश के आलोक में प्रतिवादी सं. 4 के खिलाफ निर्णय चाहता है। वादी के अनुसार, प्रतिवादी सं. 4 ने निम्नलिखित तथ्यों को स्वीकार किया है:

- i. वादी एवं प्रतिवादी सं. 1 से 3 वाद संपत्ति के सह-मालिक हैं; एवं
- ii. प्रतिवादी सं. 4 को वादी के पीठ-पीछे प्रतिवादी सं. 1 से 3 के द्वारा किरायेदार के रूप में वाद संपत्ति में शामिल किया गया है।

2. वादी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि वर्तमान आवेदन के माध्यम से वादी विरचित मुद्दों को चुनौती नहीं दे रहा है, बल्कि स्वीकृति पर निर्णय चाहता है। किसी पक्षकार को तथ्यों को विशेष रूप से अभिवाक् करना होता है तथा हवा-हवाई बचाव स्वीकार्य नहीं है। यदि किरायेदारी के बारे में तथ्य विशेष रूप से नहीं बताए गए हैं, तो कोई मुद्दा तैयार नहीं किया जा सकता है। *डी.एम. देशपांडे व अन्य बनाम वि.प्र. के माध्यम से जनार्दन काशीनाथ कदम (मृतक) व अन्य, एआईआर 1999 एससी 1464* पर भरोसा किया जाता है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि प्रतिवादी सं. 4 ने स्वीकार किया है कि वादी प्रतिवादी सं. 1 से 3 के साथ सह-हिस्सेदार है तथा इस प्रकार प्रतिवादी 1 से 3 द्वारा कोई वैध पट्टा निष्पादित किया जा सकता था। चूंकि यह कोई वैध किरायेदारी नहीं है, अतः प्रतिवादी सं. 4 को वाद

परिसर खाली करना होगा। किरायेदारी के अधिकार को समझौते की अस्पष्ट अभिवचन या सह-हिस्सेदार होने की प्रति अभिवचन पर नहीं उठाया जा सकता है। *पाम एंटीबायोटिक्स लिमिटेड बनाम सुदेश मधोक, 186 2012 डीएलटी 652* पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया गया है कि किसी मुद्दे को उठाने के उद्देश्य से संक्षिप्त अभिवचन अपर्याप्त हैं। सह-हिस्सेदारों के अधिकारों को देखते हुए, सभी सह-हिस्सेदारों की सहमति के बिना आम संपत्ति को अलग नहीं किया जा सकता है या किराए पर नहीं दिया जा सकता है। *आई. गौरी व अन्य बनाम डॉ. सी.एच. इब्राहिम व अन्य, एआईआर 1980 केरल 94; संत राम नगीना राम बनाम दया राम नगीना राम व अन्य, पंजाब 528 एवं छेदी लाल व अन्य बनाम छोटे लाल, एआईआर (38) 1951 इलाहाबाद 199* पर भरोसा किया गया है।

3. दूसरी ओर प्रतिवादी सं. 4 के विद्वान अधिवक्ता का यह प्रतिविरोध है कि लिखित कथन में कथित रूप से स्वीकृति नहीं हैं। इसके अलावा प्रारंभिक आपत्तियों में बताए गए तथ्य पूर्वाग्रह के बिना हैं तथा गुणागुण के आधार पर प्रतिउत्तर नहीं देते हैं। सत्यापन में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि प्रारंभिक आपत्तियों में किए गए कथन प्राप्त विधिक जानकारी के आधार पर सही माने जाते हैं। प्रतिवादी सं. 2 ने लिखित कथन में कहा है कि उचित रूप से विभाजन किया गया था। यह विवादित प्रश्न होने के कारण इस स्तर पर निर्णय नहीं लिया जा सकता है क्योंकि प्रतिवादी सं. 2 ने अभी तक साक्षी

कठघरे में प्रवेश नहीं किया है। इसके अलावा पट्टेदार को स्वामित्व के बारे में यह जानने की आवश्यकता नहीं है कि कोई सह-हिस्सेदार है या नहीं या संपत्ति का विभाजन है या नहीं हुआ है। इसके अलावा वादी द्वारा पट्टा विलेख पहले ही प्रस्तुत किया जा चुका है।

4. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना है।

5. वादी के विद्वान अधिवक्ता ने मुझे प्रतिवादी सं. 4 के लिखित कथन से अवगत कराया है। प्रतिवादी सं. 4 द्वारा दायर लिखित कथन में प्रारंभिक आपत्तियों के पैरा-6 में कहा गया है, "इस प्रकार वादी अपने पिता की संपत्ति में सह-हिस्सेदार के रूप में प्रतिवादी सं. 1 से 3 को तथा प्रतिवादी सं. 4 को उनका किरायेदार होने के कारण परेशान नहीं कर सकता है। इसलिए वर्तमान मामला अकेले इस आधार पर खारिज होने योग्य है।" इस कथन को अलग से नहीं पढ़ा जा सकता है। लिखित कथन में प्रतिवादी सं. 4 की प्रारंभिक आपत्ति सं. 6 यह है कि प्रतिवादी सं. 1 से 3 और वादी क्रमशः वाद संपत्ति एवं दूसरी मंजिल पर शुरू से ही अनन्य, निर्बाध और स्थापित कब्जे में हैं, जो आकार और क्षेत्र में बिल्कुल बराबर एवं एक जैसे हैं तथा इस तरह उनमें से किसी के पास अपने हिस्से से अधिक किसी भी क्षेत्र का कब्जा नहीं है। इसके अलावा, जैसा कि अभिलेख से पता चलता है, वादी ने वर्तमान वाद से पहले कभी भी वाद संपत्ति पर किसी भी तरह से कोई आपत्ति नहीं की या कोई दावा नहीं किया। इसलिए, यह भवन का विभाजन/बंटवारा है। हालांकि प्रत्येक सह-भागी

को समान हिस्से का वितरण और लंबे समय तक प्रत्येक के कब्जे में रहना तथा बिना किसी आपत्ति, बाधा, इनकार एवं रुकावट के उनके द्वारा स्वीकार और आनंद लिया जाना विभाजन/बंटवारा है, लेकिन इसके अलावा यह भी सुस्थापित विधि है कि यदि सह-हिस्सेदार संपत्ति के अविभाजित भूमि के किसी हिस्से पर अपने हिस्से से अधिक नहीं के अनन्य कब्जे में है, तो विभाजन होने तक उसके कब्जे में बाधा नहीं पहुंचाई जा सकती है एवं उसके हस्तांतरिती के पास भी अधिकार होंगे तथा विभाजन होने तक अन्य सह-हिस्सेदार द्वारा उसे बेदखल नहीं किया जा सकता है। वर्तमान मामले में प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पास दावे वाली संपत्ति का एकमात्र कब्जा था, जो दिनांक 6 मार्च, 1997 की वसीयत के अनुसार श्री अजय खन्ना के हिस्से में आई, जो प्रतिवादी सं. 1 के पति थे तथा स्वर्गीय श्री अजय खन्ना ने दिनांक 27 दिसंबर, 1999 की अपनी वसीयत के तहत अपने पिता की संपत्ति में अपना हिस्सा अपनी पत्नी श्रीमती गीता खन्ना, प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में कर दिया था। अन्यथा भी, चूंकि संपत्ति (संपूर्ण) पैतृक है, इसलिए वसीयत के अभाव में भी केवल प्रतिवादी सं. 1 से 3 के पास श्री अजय खन्ना द्वारा छोड़ी गई दावे वाली संपत्ति पर अधिकार है।

6. इसके अलावा प्रारंभिक आपत्तियाँ विधिक सलाह पर आधारित होती हैं। वे गुणागुण पर आधारित उत्तर नहीं हैं, जिसमें पक्षकार को विशेष रूप से

तथ्यों का तर्क देना होता है। प्रारंभिक आपत्तियों में पक्ष विपरीत तर्क भी दे सकते हैं। इसे स्वीकृति नहीं माना जाएगा।

7. यह सुस्थापित है कि एक स्वीकृति स्पष्ट और सुस्पष्ट शब्दों में दूसरे पक्षकार के मामले को स्वीकार करने वाली होनी चाहिए। *स्नेह वसीह व अन्य बनाम फिलाटेक्स इंडिया लिमिटेड व अन्य, 95 (2002) डीएलटी 373* में इस न्यायालय ने कहा:

“6. उपरोक्त उद्धृत आदेश 12 नियम 6 के प्रासंगिक अंश का अवलोकन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अभिवाक् में या अन्यथा तथ्य की स्वीकृति होनी चाहिए तथा यदि ऐसी स्वीकृति दी गई है तो न्यायालय किसी भी स्तर पर उस संबंध में निर्णय सुना सकता है। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि सबसे पहले, स्वीकृति तथ्यों की होनी चाहिए। स्वीकृति स्पष्ट एवं असंदिग्ध होनी चाहिए। स्पष्ट रूप से विधि के प्रश्नों के संबंध में कोई स्वीकृति आवश्यक नहीं है, जिस पर हमेशा विचार किया जा सकता है। तथा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 12 नियम 6 का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू यह है कि न्यायालय के लिए कार्य करना एवं निर्णय पारित करना अनिवार्य नहीं है क्योंकि प्रत्येक मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा। ये सिद्धांत अच्छी तरह से पहचाने जाते हैं तथा माधव लीजिंग फाइनेंस (प्रा.) लिमिटेड बनाम इरोज एजुकेशनल इन्फोटेक प्राइवेट लिमिटेड 68 (1997) डीएलटी 846 के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का संदर्भ लाभप्रद रूप से लिया जा सकता है। उद्धृत मामले में एक पंजीकृत पट्टा समझौता था। पट्टे की अवधि समाप्त होने के बाद कब्जे को सौंपने के लिए किरायेदार के खिलाफ सिविल वाद दायर किया

गया था। प्रतिवादी ने अभिवचन दिया था कि पट्टा विलेख के साथ-साथ किराया समझौते को मौखिक रूप से दो साल की अवधि के लिए नवीनीकृत किया गया था। इस तथ्य का उस मामले में वादी द्वारा फिर से खंडन किया गया था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि आदेश 12 नियम 6 के तहत एक डिक्री केवल तभी पारित की जा सकती है जब प्रवेश स्पष्ट और असंदिग्ध हों तथा जब उस मामले के विशिष्ट तथ्यों में ऐसा नहीं था, तो इस न्यायालय ने परिसर के कब्जे के बारे में निर्णय सुनाना उचित नहीं समझा।

8. इसके अलावा प्रतिवादी सं. 4 द्वारा यह स्वीकार नहीं किया गया है कि उसे वादी के पीछे प्रतिवादी सं. 1 से 3 द्वारा किराएदार के रूप में वाद संपत्ति में शामिल किया गया था। चूंकि प्रतिवादी सं. 4 वादी तथा प्रतिवादी सं. 1 से 3 के बीच कथित मौखिक विभाजन से अनजान है, जो वादी के मृतक भाई के विधिक उत्तराधिकारी हैं, इसलिए एक विशेष, निर्बाध, शांतिपूर्ण कब्जे से उसका अनुमान लगाना गलत नहीं हो सकता है।

9. वादी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि किरायेदारी आदि के बारे में कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया है तथा इस प्रकार प्रतिवादी सं. 4 की अभिवचन अस्पष्ट हैं। *डी.एम. देशपांडे* (पूर्वोक्त) में माननीय न्यायाधीशगण उस मामले का निपटान कर रहे थे जिसमें अपीलार्थी ने कहा था कि वह एक किरायेदार था, हालांकि, उसके पक्ष में बनाए गए कथित किरायेदारी के बारे में कोई विवरण दाखिल नहीं किया गया था और न ही यह उल्लेख किया गया था कि किरायेदारी किसने बनाई तथा उक्त किरायेदारी कैसे अस्तित्व में आई।

वर्तमान मामले में वादी ने स्वयं प्रतिवादी सं. 1 तथा प्रतिवादी सं. 4 के बीच पट्टा करार दाखिल किया है तथा इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता है कि लिखित कथन में दिए गए कथन अस्पष्ट हैं जिसके परिणामस्वरूप वादी के पक्ष में डिक्री पारित हुई।

10. नतीजतन, आवेदन खारिज किया जाता है।

अंत.आ. सं. 6867/2012 (प्रतिवादी सं. 1 एवं 3 आदेश VI नियम 16 सहपठित सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत)

1. इस आवेदन के माध्यम से प्रतिवादी सं. 1 व 3 ने शिकायत से अपमानजनक एवं अप्रासंगिक अभिवचनों को हटाने की मांग की है।

2. वादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वाद में वादी की प्रार्थना प्रतिवादी सं. 1 से 3 द्वारा प्रतिवादी सं. 4 के पक्ष में दिनांक 22 सितंबर, 2010 को निष्पादित की गई पट्टा विलेख को शुरू से ही शून्य एवं अमान्य घोषित करने के लिए है, तथा इसलिए प्रतिवादी सं. 4 में कोई अधिकार, शीर्षक या हित निहित नहीं है; वाद के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं. 4 को वाद संपत्ति को अलग करने या कब्जे से अलग होने से रोकने के लिए अनिवार्य और स्थायी व्यादेश प्रदान किया जाए तथा वाद की लागतों को वादी को सौंपने के लिए कहा जाए। इस प्रकार प्रतिवादी सं. 1 व उसके पति के बीच कथित संबंधों के संबंध में कथन अप्रासंगिक हैं एवं वाद के निर्णय के लिए आवश्यक नहीं हैं, साथ ही झूठे एवं निराधार भी हैं।

3. आवेदक/प्रतिवादी सं. 1 और 3 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि वादपत्र में वादी जो प्रतिवादी संख्या 1 का साला तथा प्रतिवादी सं. 2 और 3 का चाचा है, ने अपने दिवंगत भाई श्री अजय खन्ना एवं प्रतिवादी सं. 1, स्वर्गीय श्री अजय खन्ना की पत्नी के बीच वैवाहिक संबंधों के संबंध में मानहानिकारक और दुर्भावनापूर्ण कथन किए हैं। उसने प्रतिवादी सं. 2 और 3 के पितृत्व पर भी संदेह व्यक्त किया है। वादपत्र में किए गए कथन वाद में शामिल मुद्दे से संबंधित नहीं हैं। *साथी विजय कुमार, 2006 (13) एससीसी 353; मंजीत के. सिंह बनाम एस. कंवरजीत सिंह, 58 (1995) डीएलटी 208 एवं श्रीमती रेखा सिंघल बनाम लवलीन सिंघल, 96 (2002) डीएलटी 289* पर भरोसा किया गया है।

4. दूसरी ओर, वादी/गैर-आवेदक के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिविरोध है कि जिन कथनों को हटाने की मांग की जा रही है, वे प्रतिवादी सं. 1 के उनके दिवंगत भाई/पति की वसीयत पर आधारित हैं तथा इसलिए उन्हें निंदनीय, दुर्भावनापूर्ण, झूठा, मनगढ़ंत या अप्रासंगिक नहीं कहा जा सकता है, जिससे उन्हें अभिवचनों से हटाने का निर्देश दिया जा सके।

5. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

6. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वर्तमान वाद घोषणा, स्थायी एवं अनिवार्य व्यादेश तथा वाद संपत्ति पर कब्जे के लिये है। प्रतिवादी सं. 1,

2 एवं 3 वादी के मृतक भाई की पत्नी तथा बच्चे हैं। वाद में वादी का मामला यह है कि वादी के पिता एवं प्रतिवादी सं. 1 के ससुर दिनांक 6 मार्च, 1997 की वसीयत को पीछे छोड़कर दिनांक 8 जून, 1997 को स्वर्गवासी हो गये थे जिसमें उसकी सभी सभी चल और अचल संपत्तियां वादी और उनके दिवंगत भाई श्री अजय खन्ना के नाम थीं, जिनकी भी दुर्भाग्यवश 31 जनवरी, 2000 को असामयिक मृत्यु हो गई थी।

7. सि.प्र.सं. के आदेश VI नियम 16 निम्नानुसार है:-

“16. अभिवचनों का काट दिया जाना - न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी अभिवचन में की कोई भी ऐसी बात काट दी जाये या संशोधित कर दी जाये—

(क) जो अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाली है, अथवा

(ख) जो वाद के ऋजु विचारण पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली या उसमें उलझन डालने वाली या विलंब करने वाली है, अथवा

(ग) जो अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।”

8. इस प्रकार यह प्रावधान स्पष्ट रूप से न्यायालय को किसी भी अभिवचन को खारिज करने का अधिकार देता है यदि वह अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाला हो या वाद की निष्पक्ष सुनवाई में पूर्वाग्रह, परेशानी या देरी करने की प्रवृत्ति रखती हो या अन्यथा न्यायालय की

प्रक्रिया का दुरुपयोग करती हो। नियम का अंतर्निहित उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वाद का प्रत्येक पक्षकार अपने विरोधी को परेशानी पहुँचाए बिना अपने अभिवचन को समझने योग्य रूप में प्रस्तुत करे। साथी विजय कुमार (पूर्वोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश VI नियम 16 के प्रावधानों पर विचार करते हुए कहा-

“27. उपरोक्त प्रावधान न्यायालय को किसी भी अभिवचन को खारिज करने का अधिकार देता है यदि वह अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाली हो या वाद की निष्पक्ष सुनवाई में पूर्वाग्रह, परेशानी या देरी करने वाली हो या अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग हो। नियम का अंतर्निहित उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वाद में प्रत्येक पक्षकार अपने विरोधी को परेशानी पहुँचाए बिना अपने अभिवचन को एक सुबोध रूप में प्रस्तुत करे [देखें डेवी बनाम गैरेट]।

28. आदेश 6 के नियम 16 को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि न्यायालय निम्नलिखित परिस्थितियों में याचिकाओं को खारिज करने का आदेश दे सकता है;

(क) जो अनावश्यक, कलंकात्मक, तुच्छ या तंग करने वाली है, अथवा

(ख) जो वाद के ऋजु विचारण पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली या उसमें उलझन डालने वाली या विलंब करने वाली है, अथवा

(ग) जो अन्यथा न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।”

29. ...

30. ...

31. ...

32. ...

33. साथ ही, हालांकि, इस बात को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता कि आम तौर पर न्यायालय पक्षकारों को यह निर्देश नहीं दे सकता कि उन्हें अपने अभिवचन कैसे तैयार करनी चाहिए। यदि पक्षकारों ने कथन देकर या तर्कपूर्ण मुद्दे उठाकर अभिवचनों के नियमों का उल्लंघन नहीं किया है, तो न्यायालय अभिवचनों को खारिज करने का आदेश नहीं देगा। अभिवचनों को खारिज करने की शक्ति असाधारण प्रकृति की है और न्यायालय द्वारा इसका प्रयोग संयम से तथा अत्यधिक सावधानी, जागरूकता एवं सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए [देखें *रूप लाल बनाम नछतर सिंह गिल*, के.के. बनाम के.एन. मोदी; *यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम नरेश कुमार*]

34. एक शताब्दी से भी अधिक समय पहले, *नोल्स बनाम रॉबर्ट्स* बोवेन मामले में एल.जे. ने कहा था:

"मुझे लगता है कि यह नियम कि न्यायालय को पक्षकारों को यह निर्देश नहीं देना चाहिए कि उन्हें अपना मामला कैसे तैयार करना है, हमेशा छुपाकर रखा जाना चाहिए। लेकिन यह नियम, निश्चित रूप से, इस संशोधन एवं सीमा के अधीन है कि पक्षकारों को विधि द्वारा निर्धारित अभिवचनों के नियमों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए; और यदि कोई पक्षकार ऐसी अभिवचन पेश करता है जो अनावश्यक है, एवं यह कार्यवाही के परीक्षण को पूर्वाग्रहित, कलंकित तथा विलंबित करती है, तो यह एक ऐसी अभिवचन बन जाता है जो उसके अधिकार से परे

है। यह एक मान्यता प्राप्त सिद्धांत है कि एक प्रतिवादी न्यायानुसार का दावा कर सकता है ताकि वादी का दावा एक सहज रूप में प्रस्तुत किया जा सके, ताकि उसे इसे पूरा करने में शर्मिंदगी न हो; तथा न्यायालय को अभिवचनों को चांसरी न्यायालय की पुरानी दमनकारी अभिवचनों में बदलने से रोकने के लिए सावधानी बरतने में सख्त होना चाहिए।"

9. एकमात्र आधार जिस पर वादी ने अभिवचनों का समर्थन किया है, वह यह है कि ये तथ्य उसके मृतक भाई की वसीयत में बताए गए हैं। हालाँकि, वर्तमान मामले में, वादी द्वारा श्री अजय खन्ना की वसीयत का हिस्सा बताए गए वादपत्र में दिए गए कथन, न तो प्रासंगिक हैं और न ही पक्षकारों के बीच वास्तविक मुद्दे के निर्धारण के लिए आवश्यक हैं, इसके अलावा वे निंदनीय, रिष्टिपूर्ण एवं आपत्तिजनक हैं। ऐसे आरोपों को अभिलेखों पर बनाए रखने की अनुमति देना न केवल कार्यवाही की निष्पक्ष सुनवाई को शर्मिंदा करेगा, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से अभिवचनों में निंदनीय तथ्यों को अनुमति देने के बराबर होगा, जिसे सीधे तौर पर अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसके मद्देनजर, अंत.आ. सं. 6867/2012 के पैरा 4 में विस्तृत पैराग्राफ सं. 9, 10, 15, 17 एवं 24 के अंशों को हटाने का निर्देश दिया जाता है।

आवेदन का निपटान किया जाता है। इन अनुच्छेदों को हटाकर संशोधित वादपत्र चार सप्ताह के भीतर दाखिल किया जाये।

(मुक्ता गुप्ता)
न्यायाधीश

02 सितंबर, 2013

'वीएन'

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।